"नाउ-भ्रम !"

" बावन अछर लोक त्रै - सभ कछ इन ही माहि ।
ऐ अखर खिर जाहिगे - ओई अखर इन मह नाहि ।"

(कबीर-340)

इन वचनों से गुरू जी के भाव "नाउ" के प्रति स्पष्ट निर्देश देते हैं । "परमात्मा" अक्षरों का तो कोई विषय ही नहीं है । बावन अक्षर संस्कृत भाषा की वर्णमाला संसार के कार्य-व्यवहार को चलाने का साधन मात्र है । विचार करो यदि वस्तु-पदार्थो

इत्यादि के कोई "नाम" न रखे जायें तो संसार का "कार्य व्यवहार" जो सारा का सारा जड़ तत्वों से सम्बन्धित है कल्पना में भी चलना असंभव है । यह एक साधन मात्र है याद रखने का सम्बन्धित पदार्थ को । उसी तरह से "ईश" को याद रखने के लिये उसे भी किसी न किसी नाम से ही पुकारा जाता है । लेकिन जिसे पुकारा जा रहा है वो तो वही एक निश्चित "तत्व" ही है न । नाम बदलने से तत्व अथवा उसके गुण-धर्म तो बदल नहीं जाते । राम को यदि श्याम कहने लगें तो क्या राम के गुण-धर्म बदलने लगेगें ? कदापि नहीं ! फिर आप चाहे उसे किसी भी अपने अनुकूलित नाम से पुकार लें कोई बाधा नहीं लगती । यह सब क्रिया चेतन का जड़ में सीमित होने के कारण अपनानी पड़ती हैं आगे के मण्डलों में तो केवल ख्याल ही साधन के रूप में रहता है । इसी जड़ की सीमा को ले कर के "लफजी नामों" में झगड़ा पैदा कर दिया गया है कुछ निजी स्वार्थी (कट्टरवादी) महंतों (गद्दीधारी दलालों) द्वारा । इन जड़ लफजों के भंवर में डूबा इन्सान-इन्सान के खून का प्यासा हो रहा है ! कारण "विवेक" की कमी तथा "अनुसंधान" करने से कतराना । लेकिन जो कोई भी मेहनत को अपनाता है उसे इस के "खोखलेपन" का एहसास शीघ्र ही मिल जाता है और वह अपने को फिर इस सारे बखेड़े से उपराम कर लेता है । फिर वह उसकी "तलाश" ठीक जगह पर ही करता है ।

और वह स्थान खुद उसका अपना शरीर ही है । फिर उसका इस सारे संसार से कोई सम्बन्ध ही नहीं रह जाता ! सम्बन्ध यदि रखे तो फिर अनुभव किसे करे । इसलिये "परमात्मा" स्वयं अपने वचनों में स्पष्ट करते हैं कि मैं "खोज" का नहीं केवल अनुभव का ही विषय हूँ। रोम-रोम में उसके सिवाय और कौन समाया हुआ है। फिर जड़-चेतन सभी उसी से ही तो केवल "रोशन" हैं। उस के बिना किस की "कल्पना" की जा सकती है । जब यह भेद "सच्चे परमार्थी" को पता चल जाता है अपनी "स्वयं" की जिज्ञासा (तथा ईश कृपा) से तभी फिर वह उसे पुकारना भी इसकी "तौहीन" ही जानता है । केवल उसके "निजी अनुभव" रूपी आनन्द में ही गोते लगाना पसंद करता है बिना किसी तीसरे के दखल के । कारण की तीसरे के प्रवेश करते ही यह निजी अनुभव का आनन्द रूपी "तार" टूट जाता है । अतः यह आप निश्चित जानियेगा कि जब तक ईश और आत्मा के बीच कोई तीसरा है तो यह "आनन्द" आप कभी भी किसी काल में भी न (अनुभव) कर पायेंगे चाहे वह तीसरा तीनों मुल्कों का कितना भी महान से महानतम "बादशाह" अथवा पदार्थ इत्यादि ही क्यों न हो । आप इस आनन्द से दूर ही दृष्टिगोचर होंगे । (प्रेम गली अति सांकरी । ता में दो न समाहि।) फिर अब फैसला आप के अपने हाथ में है कि यदि आप "सच्चे जिज्ञासु" हैं तो फिर आप

हर तीसरे को हटाने में देर क्यों कर रहे हैं । झाड़ू से अच्छी तरह अपनी हृदय रूपी धरती को साफ-निर्मल-पाक क्यों नहीं करते । स्पष्ट है कि आप "नकली साधु" बने असली साधु का ढोंग रचा रहे हैं। दुनिया को नहीं केवल अपने को ही उल्लू बना रहे हैं कारण पल-पल "प्राणशक्ति" खत्म होती जा रही है जो निश्चित भण्डार के रूप में मिली हुई है और कब धोखा दे देगी अर्थात खत्म हो जाये यह आप कल्पना में भी न जान पायेगें। "प्राणी तू आइआ लाहा लैण । लगा कित कुफकड़े - सभ मुकदी चली रैण । कुदम करे पशु पखिआ - दिसै नाही काल ।" (5-43) फिर कुछ यदि बचेगा तो केवल रोना-पीटना ही और इस दुख का कुछ भी उपाय न कर पाओगे । फिर अभी प्राण शक्ति आपके हाथ में ही है, क्यों नहीं उसका "सदुपयोग" कर लेते । "प्राणशक्ति" रूपी कीमत तो चुकानी ही पड़ती है चाहे पाप करे अथवा पुण्य । फिर क्यों नहीं इन दोनों से रहित केवल "आत्मा के कल्याण" के निमित आप उस को उसी की भेंट चढ़ा दें जिसने आप को यह दौलत बख्शी है । पाप-पुण्य तो दोनों ही आत्मा के लिये पाप ही हैं न । कारण दोनों को भुगतने के लिये उसे पिंजरे को तो धारण करना ही पड़ेगा । फिर कहाँ की विवेकता है बताईये ! इसी कारण "ईश" को अनामी कहा गया है पर फिर भी जिस भी नाम से इसे पुकारा जाये वह सुनता अवश्य है । यानी लफज केवल उसे याद करने

का साधन मात्र हैं न कि वह स्वंय (वस्तु अथवा पदार्थ इत्यादि) जैसे रोटी लफज रोटी पदार्थ तो नहीं हो जाता, लफज व्यवहार मात्र के लिये हैं और पदार्थ शरीर की तृप्ति के लिये । अब यही केवल रोटी-2 पुकारें तो क्या बिना पदार्थ के भोग लगाये आपको "तृप्ति" सुपने में भी प्राप्त हो सकेगी कभी अर्थात कदापि नहीं । और फिर केवल पुकारने से क्या रोटी प्रगट हो जाती है ? कदापि नहीं ! उसे प्राप्त करने के लिये व्यवहारिक रूप से पुरुषार्थ करना पड़ता है । "घालना घालनी" पड़ती है फिर कहीं जा कर के रोटी उपलब्ध होती है जिस का भोग लगा कर के शरीर को तृप्ति का बोध होता है ।

"परमात्मा" को ही नाम(केवल-प्रकाश) शब्द (केवल रागमई प्रकाशित आवाज) वर्ड-कीर्तन-हुकम-ज्ञान-ताओ-लागोस इत्यादि अनन्त लफजों से ब्यान किया गया है । तो क्या लफज परमात्मा हो जाता है ? मूर्खों के विषय में ऐसा ही निश्चित किया जा रहा है । महान-2 गद्दीधारी महंत (दलाल) इसी "ईश" रूपी पदार्थ को अपनी क्षमता से काट-2 कर लफजों में तकसीम करके अपने जी हजूर दाता जी अनुयायियों को धड़ल्ले से बांट रहे हैं । और लेने वालों ने भी कूद-फांद कर खूब हल्ला मचा रखा है "नाम" ले आये हैं ! यानी ईश को लफजों में कैद कर लिया गया है । अब जब उससे मेल कर लेगें, पर यह अनन्त युगों के

बाद भी "नाउ" से विमुख अथवा खाली ही रहता है और कूदने-नाचने की कीमत चउरासीह लाख योनियों में यमों की चोटें खाता हुआ चुकाता फिरता है । पर "मनमुख मुगध बूझे नाही बाहर भालण जाई ।" सभी झगड़े इस शरीर से केवल बाहर ही हैं (नाम रूपी लफजों सहित) अन्दर कोई झगड़ा नहीं इन सभी का !

"लफज" केवल साधन मात्र हैं ख्याल को इस एक से जोड़ने का क्योंकि ख्याल बाहर फंसा है दूसरे अनगिनत परन्तु पदार्थों इत्यादि में । नाउ (ईश) अजपा जप है वह स्वयं ही अपने को जप रहा है ! जड़ लफजों को जपने के लिये एक चेतन ताकत (आत्मा) की जरूरत है उसकी अनुपस्थिति में तो इन लफजों की कल्पना ही असंभव है ।

"नाउ" केवल आत्मिक (चेतन) विषय है "अखी बाझह वेखणा - विण कना सुनणा । पैरां बाझह चलणा - बिन हथा करणा । जीभै बाझह बोलणा - इउ जीवत मरणा । नानक हुकम पछाण कै - तउ खसमै मिलणा ।" (2-139) "ईश" इन्द्रियातीत है अर्थात अलख-अगम-अगोचर है । किसी की क्षमता उस तक पहुँचने की कल्पना में भी नहीं है । आत्मिक क्षमता "बारह सूरज" की केवल उसके द्वार तक पहुँचने में ही केवल सक्षम है । प्रवेश असंभव है कारण उस अवस्था में स्थिर रहने की इसमें क्षमता ही नहीं है । केवल ईश (नाउ) ही इसे विशेष "चार

सूरज" की क्षमता प्रदान कर समर्थ बनाता है ऊपर के अविनाशी महलों में प्रवेश करने के लिये । इससे सारा मजमून स्पष्ट हो जाता है कि नाउ (ईश) केवल आत्मिक विषय है तथा यह केवल उसी से ही प्राप्त होना संभव है । "अमृत नाम भोजन हर देई । कोट मधे कोई विरला लेई ।" (3-1335) साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि यह करोड़ों-अरबों में किसी विरले को ही प्राप्त होना संभव है । ऐसा कौन भाग्यशाली बनता है वो भी गुरू साहिब ने स्पष्ट किया है "इन्द्री जित पंच दोख ते रहत । नानक कोट मधे को ऐसा अपरस ।" (5-274) यह विषय पुरुषार्थ (कमाई) तथा ईश कृपा से ही केवल सम्बन्धित है। पर इन ईश्वर बने बैठे दलालों (महंतों) का क्या इलाज है जो लफजों में "नाउ" तथा दर्शनों में मुक्ति बिना कुछ लिये ही बाँट रहे हैं । ऐसे परोपकारियों से सदा ही सावधान रहना तथा "अनुसंधान" पर ध्यान केंद्रित करना ही वांच्छनीय है । इसकी नजर हर "अणु" पर है फिर हम कैसे उसकी नजर से बच सकते हैं ? यानी कभी सुपने में भी नहीं, हम सोते हैं, वो जागता है और सब की पालना करता है ! कमी तो केवल अपने में ही है कि हम उसका हर पल अनुभव नहीं करते । उद्योग उसके लिये करना पड़ता है जिसे प्राप्त करना हो । जो प्राप्त है उसके लिये फिर कैसा उद्योग ? यही प्रश्न विचारनीय है । सभी समस्याऐं अपने आप ही हल हो जाती हैं । आँख बंद है और शोर

मचा रहा है, सूर्य डूब गया, और अँधेरा हो गया। पर सूर्य तो सिर पर रोशन है। फिर क्या उपाय है। इसे खामोश करने का ? केवल आँख खोल ले प्रकाश प्रकट है।

उसी तरह "नाउ" आवाज (शब्द) की तरह से है प्रकाश के रूप में, फिर अँधेरा क्यों है ? अन्दर की तरफ से इसने आँख मूद रखी हैं। बाहर इसे रोशनी दिखती है। कारण यह केवल बाहर देखना ही पसन्द करता है। इलाज क्या है ? बाहर देखना बन्द कर दें, बाहर अपने आप ही अँधेरा हो जायेगा। आप अभी कर के देख लो प्रयोग स्वतः सिद्ध है अन्दर देखना शुरु कर दें अन्दर प्रकाश हो जायेगा ! प्रकाश ने कहीं से नहीं आना वो तो सूर्य की तरह पहले से ही भरपूर मात्रा में प्रकट अथवा प्रत्यक्ष ही है निश्चित रूप से। लेकिन "दलाल" लोगों ने भरपूर फायदा उठाया है। अतः दूसरे को दोष देने से बेहतर है खुद की परख करें। आप सोयेंगे तो लूटने वाले तो लूटेगें ही भाई। बचना चाहते हो तो चौकन्ने रहो। जो सोता है वह खोता है जो जागता है वह पाता है। "दस इन्द्री कर राखै वास। ताकै आतमै होई परगास।" (5-236) इस विषय को अर्थात "प्रकाश" को हम दुनिया रूपी विश को चाटते हुए केवल "लफजों" (नाम) में ही प्राप्त कर लेना चाहते हैं। लंगूर की सन्तान अपनी वृति को कैसे बदल सकती है शक्ल बेशक इन्सान से मिलने लगी हो। भाई नाराज होने की

कोई जरूरत ही नहीं आपके खोजी (वैज्ञानिकों) नें ही सिद्ध किया है कि इन्सान के पुरखे लंगूर ही हैं उन्हीं में सुधार हुआ और आज मानव उपलब्ध है । पुरानी नस्लों में तो इन्होनें पूँछ भी सिद्ध कर रखी है इनकी खोजें विचार कर देख लें । पर वृति न सुधर सकी "लोभ की वृति" एक मुठ्ठी चने केवल और शेष जीवन (डमरू-डण्डे) से मार खाना और जगह-2 नाचना या किसी पिंजरे की शोभा बढ़ाना या अपनी खाल उतरवा करके किसी के वस्त्र बन कर उसे गर्म करना मात्र ही केवल इसे नसीब होता है । अगर एक मुठ्ठी चने के लोभ को खोल दे अर्थात त्याग दे तो सभी विपदाओं से बच सकता है पर कदापि इसे मंजूर नहीं चाहे चमड़ी ही क्यों न उतरवानी पड़े । वही हाल इसके वंशधर मानव का भी है । संसार रूपी लोभ का त्याग करना कभी सुपने में भी पसंद नहीं करता भले ही बदले में चउरासीह लाख योनियों में "मास्टर घसीटा राम जी" घसीटते फिरें ! यही केवल इस दो पैर के जानवर केवल दुम की ही कमी रह गई है शक्ल बेशक इन्सान से मिलती जुलती है, की विशेष लोभ रूपी वृति है। इसी कारण इसे "लंगूर" की संज्ञा दी गई है केवल शक्ल इंसान की होने से ही कार्य न बनेगा भाई जी पशु वृति का पूर्ण रूप से त्याग करके ही यह अपने आप को इन्सान की श्रेणी में खड़ा करने का अधिकार प्राप्त कर सकता है । इसके लिये आवश्यक है कि हम अपने-2 धर्म में ही केवल

दृढ़ निश्चय से स्थिर रहें । दूसरे के धर्म को अपनाने से तो केवल पतन ही निश्चित है । सभी शास्त्रों में "परमात्मा" ने ऋषियों के मुख से यही कहलवाया है ।

"ब्रह्म बिन्दे सो ब्राह्मण कहिये" परमात्मा का शौक़ रखने वाले उसे प्राप्त करने के लिये अपना सर्वस्व होम कर, ब्राह्मण कहलााने के अधिकारी जन हैं । मन को वस में रखना-संयम में वरतना तथा तप-उपवास से इन्द्रियों के बल को क्षीण करना ही केवल ब्राह्मण का धर्म है । विचार कर देखें तो हम ने मन के अधीन अपने को रख कर मेरा-मेरा करते खूब राग-रंग में मस्त हो कर के सारी दुनिया का नाश करने के लिये "केवल" अपनी इन्द्रियों को निरन्तर बलवान बनाने में ही लगे हुए हैं। चैखटा (मुखौटा) बेषक नाम-अमृत-गुरु-सत्संग इत्यादि "ब्राह्मण धर्म" का चोरी कर के लगा लिया है । पर व्यवहार में तो केवल रंग तमाशा राग रंग ही समाया हुआ है जो केवल क्षत्रिय धर्म का उपअंग मात्र ही है । क्षत्रिय धर्म में शिकार -मांस-मद दिखावा-शूरता सभी प्रकार के उपहार देने तथा स्वीकार करने-राग-रंग-तमाशा इत्यादि जितने भी पहलू हैं यह केवल उसी से सम्बन्धित हैं कारण उसकी "जान" तलवार की धार पर ही केवल टिकी है कब कुर्बान करनी पड़ेगी कोई निश्चित नहीं है । अर्थात हर वक्त तैयार पर तैयार । युद्ध में एक ही कार्य है केवल मारना

या मर जाना वो भी इंसान को । फिर शेष मांस -शिकार मद इत्यादि इस घोर धर्म के सामने क्या अर्थ रखते हैं । मरा यदि धर्म युद्ध में धर्म से लड़कर, तो सीधा स्वर्ग और यदि बचा तो धरती पर स्वर्ग । पर फिर मरने के लिये तैयार पर तैयार । अर्थात यही धर्म केवल क्षत्रिय के लिये ही है ब्राह्मण के लिये नहीं । जो अपने धर्म में स्थिर न रह कर दूसरे के धर्म इन्द्रिय बल को क्षीण करना तथा क्षत्रिय का इन्द्रिय बल बढ़ाना तथा कायम रखना । विचारिये धर्म बदलने से क्या नतीजा निकलेगा ? यानी केवल "नाश" कुछ विशेष परिस्थितियों में ब्राह्मणों नें भी क्षत्रिय धर्म को अपनाया तो कुछ विशेष कारणों से जैसे परशुराम जी, द्रौणाचार्य जी इत्यादि । दूसरी ओर विश्वामित्र जी ने ब्राह्मण धर्म अपनाया । विपत्ति के समय फिर राम-लक्ष्मण की ही मदद से अपने अपनाये धर्म को सिद्ध कर पाये । यानी बिना क्षत्रिय धर्म के ब्राह्मण धर्म की सफलता कल्पना में भी संभव नहीं है । इसी कारण जब असुर वृति बढ़ जाती है तो उसके निवारण के लिये शस्त्र धारण करने ही पड़ते हैं । इसीलिये "गुरू घर" में भी फकीरी को कायम अर्थात सुरक्षित रखने के लिये "गुरू हरगोबिंद जी" ने शस्त्रों की मर्यादा को धारण किया तथा "गुरू गोबिंद सिंह जी" नें इसे आवश्यक तौर पर एक नियम के रूप में पशु (लगूंर) के सुधरे रूप "खालसा" को बख्शा । "खालसा मेरो रूप है खास - खालसे में

हो करो निवास ।" "नाउ" की पदवी भी खालसा जी को ही बख्शी । पर हमेशा ध्यान रखने योग्य है कि खालसा दाढ़ी अथवा शस्त्र नाम नहीं है । "पूर्ण जोत जगै घट मह - ताह खालिस ताह निखालिस जाणे ।" ही "केवल" खालसा कहलाने का अधिकार रखता है शेष तो केवल दिखावा अथवा मैल मात्र ही है ।

"आज्ञा भई अकाल की तभी चलायो पंथ ।
सभ सिखन को हुकम है गुरु मान्यो ग्रन्थ ।"

"गुरु खालसा" मान्यो प्रगट गुरां की देह । जो "प्रभ को मिलबौ चहै, "खोज शब्द (नाउ) मैं लेह ।" स्पष्ट है "नाउ" के प्रकट होने वाले स्थान (हृदय) को ही खालसा कहा गया है । तथा रहमतनामा अथवा मार्ग दर्शन श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी में स्पष्ट प्रगट ही है । अब जो शौक़ रखते हैं ब्राह्मण होने का अर्थात "प्रभु" से मिलने का अथवा उस तक पहुँचने का साधन केवल और केवल "शब्द" (केवल रागमई प्रकाशित आवाज) अर्थात "नाउ" (केवल प्रकाश) ही है। जो मन-बुद्धि-इन्द्रियों से रहित केवल एक "आत्मिक बोध" मात्र ही है निश्चित रूप से । अब हो क्या रहा है विचारिये "शब्द" गुरुमुखी के लफज समझे जा रहे हैं और मार्ग दर्शक ग्रन्थ जी को परम चेतन "परमात्मा" सिद्ध किया जा रहा है । बताईये इस जमात (श्रेणी) का क्या इलाज है ? "सबदे धरती-सबदे आकास-सबदे सबद भइआ परगास ।

सगल सृष्टि सबद के पाछे । नानक सबद घटे घट आछे ।" जब ग्रन्थ जी को खोल कर पढ़ते हैं तो ये बचन मिलते हैं अब आकाश -पाताल-धरती इत्यादि सभी जड़ चेतन का आधार क्या ये गुरमुखी के लफज हैं ? घोर मूर्खता का विषय अपनाया जा रहा है सच्चा रुहानी ज्ञान तो हम कब का दफन कर चुके । केवल सिर झुका देना बाहर गाड़ी में से पास से गुजरते हुऐ उसी विशेष दिशा में ही हमने पूर्ण आत्मिक कल्याण को प्राप्त कर लिया अर्थात सभी पापों रूपी जन्म-मरन से छूट गये ! है न उस घोर कलि में "चमत्कार" का विषय । ये चमत्कार दुर्लभ सिवाय एक "लगूर वृति" को अपनाये हमारे सिवाय और कौन दिखा सकने में समर्थ हो सकता है कभी सुपने में भी ? एक मेरे सिवा सभी केवल असमर्थ ही साबित होंगे निश्चित रूप से ! सभी का अर्थ है और उस की सीमा भी है ये सभी निशान हमें संसार में रह कर शरीर रूप से व्यवहार करने के लिये ही केवल दिये गये हैं । इन में आत्मा का कोई धर्म भी शामिल नहीं है । उसका धर्म तो केवल एक "नाउ" (ईश-केवल प्रकाश) ही है। यही अमृत है तथा शेष सभी धर्म जो देह के लिये दिये गये हैं केवल विश मात्र ही हैं । चिता पर "रोम" पहले सबसे अग्नि भेंट चढ़ते हैं, फिर किस भरोसे बैठे हो, दाढ़ी भी साथ छोड़ गई जिसे रंगते-सजाते रहे सारी उम्र शेष सभी जड़ पदार्थ तो घर में ही रह जाते हैं (शस्त्र सहित) फिर

कौन साथ चलता है । (पाप तथा पुण्य) इन से नहीं बच सकते । बचाता कौन है केवल अपना धर्म (ब्राह्मण होना) अर्थात "राम नाम" "धन संग सखाई - अहनिस निरमल हर लिव लाई । राम नाम बिन कवन हमारा । सुख-दुख सम कर नाम न छोडउ - आपे बखस मिलावणहारा ।" और यह छुड़ाने वाला धन (नाउ (केवल प्रकाश)) केवल कमाई से ही प्राप्त किया जा सकता है वो भी उसकी "नदर" हो तभी । अब बताईये जिस को गुरू मानते हैं मत्था टेकते हैं परिक्रमा करते हैं उसी के हुकम को, निर्देष को सुपने में भी मानना पसन्द नहीं करते, इससे ज्यादा एक गुरू (ईश) का और किस तरह से निरादर किया जा सकता है । यानी हम आदर की जगह थूकना पसन्द करते हैं हमारी सभी क्रियाओं से तो स्वतः यही सिद्ध हो रहा है । "जित मुख नाम न उचरहि, बिन नावै रस खाह । नानक ऐवें जाणिए तित मुख थुका पाह ।" (1-473) इस परिभाषा में तो हम सभी लगभग पूरे उतरते हैं और जहाँ हमारा मुख थूकने योग्य है वहाँ हमारी चतुराई तो देखो दूसरों के मुखों पर ही थूके जा रहे हैं, यहाँ तक की "गुरू" को भी नहीं बख्शते ! "कहे प्रभ अवर-अवर किछ कीजे - सभ बाद सींगार फोकट फोकटइआ । कीओ सींगार मिलण कै ताई - प्रभ लीओ सुहागिन - थूक मुखि पइआ ।" इन सभी पहलुओं पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि "नाउ" कोई लफज अथवा जड़

पदार्थ नहीं, आत्मा के कल्याण का "केवल" परम चेतन (ईश) का ही एक अंश (गुण) मात्र है । "गुण गोबिंद नाम धुन बाणी । सिम्रित-शास्त्र-बेद बखाणी ।" "सफलता" को प्राप्त सभी रूहों ने "एक" उसी को ब्यान किया है लफजों में केवल जानकारी मात्र के लिये । अनुभव के लिये केवल पुरुषार्थ और उस की अपनी "कृपा" ही सफलता की कुंजी मात्र है । अतः भ्रमों से निकल कर अपने (आत्मा) को पतन से बचाओ । यह कार्य (सिर्फ आप स्वंय) केवल और केवल आँख बंद होने से पहले ही कर सकते हैं शेष तो सिर्फ "प्रलाप" मात्र ही है निश्चित रूप से । करतूतें तो कर ली अब केवल भुगतान बाकी है निश्चित रूप से उसके लिये तुरन्त तैयारी कर !

"नाम के धारे सगले जंत । नाम के धारे खंड ब्रहमंड । नाम के धारे सिम्रित-बेद-पुरान । नाम के धारे सुनन गिआन धिआन । नाम के धारे आगास पाताल । नाम के धारे सगल आकार । नाम के धारे पुरीआं सभ भवन । नाम कै संग उधरे सुन सूवन । कर किरपा जिस अपनै नाम लाए । नानक चउथे पद मह सो जन गत पाए ।" (5-284) इतनी महानतम वस्तु "नाउ" (केवल प्रकाश) को आप लफजों में कैद कर के ले आये हो । इसीलिये शायद नाच-कूद कर के खुशियाँ मनाई जा रही हैं जन्म दिन मुबारक हो रहा है ! कमाई धन हैं वे "जादूगर विशेष"

जिन्होंने ये कमाल कर दिखाया । और धन्य हैं आप जो जड़ चेतन को धारण कर रहा है उसे आप ने धारण कर रखा है । है न "घोर काल" में एक और "महानतम चमत्कार" रूपी महा कलियुग ! "शमशान भूमि" रूपी "धरती" पर स्वर्ग नाम के "पागलखाने" दुर्लभ विशेष में भला हम जैसे "दुर्लभ पागलों" की कोई कमी है क्या ? ठूंस-2 कर भर रखे हैं ! यदि आपको आवश्यकता है आगू अथवा प्रधान सहित विशेष-2 उच्च कोटि के विद्वान श्रेणी के पागलों की तो पच्चीस प्रतिशत अग्रिम आर्डर के साथ ड्राफ्ट के रूप में भेजें । सौ प्रतिशत भेजने पर डाक खर्च फ्री । हमारे यहाँ से विशेष सुविधा उपलब्ध है निश्चित रूप से । इन विशेष -2 तीनों दुर्लभ पागलखानों में दाखिल होना तो बहुत सुगम है पर मुक्त होना असम्भव ही है निश्चित रूप से। नकली चमक अथवा नाम विशेष सुन कर आप ने दाखिला तो ले लिया । पर अब सोचो स्वंय को आजाद कैसे करवाने में समर्थ हो सकोगे सुपने में भी इन दुर्लभ पागलखानों अथवा निकृष्ट खण्डों विशेषों से ?